

औपनिवेशिक भारत में खड़ी बोली हिंदी का प्रचार और नवजागरण की भूमिका

अनुराग सिंह

पीएचडी शोधार्थी हिंदी विभाग दिल्ली विश्वविद्यालय

सारांश

औपनिवेशिक भारत का सामाजिक, राजनीतिक और सांस्कृतिक परिदृश्य 19वीं शताब्दी के उत्तरार्ध और 20वीं शताब्दी के प्रारंभ में एक संक्रमणशील दौर से गुजर रहा था। अंग्रेजी शासन के प्रभाव, सामाजिक कुरीतियों, धार्मिक रूढ़ियों और सांस्कृतिक पतन ने भारतीय समाज में आत्मविश्वास की कमी उत्पन्न कर दी थी। ऐसे समय में नवजागरण का उदय हुआ, जिसने आधुनिक शिक्षा, वैज्ञानिक दृष्टि, सामाजिक सुधार, स्त्री स्वतंत्रता, जाति-विरोध, राष्ट्रीय चेतना और स्वाभिमान की भावना को प्रबल किया। इस नवचेतना के प्रसार के लिए जिस भाषा की आवश्यकता थी, वह जनसामान्य की भाषा अर्थात् खड़ी बोली हिंदी सिद्ध हुई। पूर्ववर्ती साहित्यिक परंपरा ब्रज और अवधी पर आधारित थी, जो मुख्यतः भक्ति और श्रृंगार के भाव व्यक्त करने में समर्थ थी, परंतु आधुनिक विचार, सामाजिक समस्याएँ और राष्ट्रीय आंदोलनों की अभिव्यक्ति के लिए पर्याप्त नहीं थी। इसी आवश्यकता ने खड़ी बोली को साहित्य में स्थान दिलाया। प्रारंभिक काल में खड़ी बोली का प्रयोग संत साहित्य, अनुवादों और मिश्रित गद्य में दिखाई देता है। अकबर काल से लेकर अंग्रेजी शासन तक यह धीरे-धीरे स्वीकार्यता प्राप्त करती रही। ईसाई मिशनरियों, समाज सुधारकों तथा राष्ट्रवादी लेखकों ने इसे सामाजिक और धार्मिक जागरण का प्रभावी माध्यम बनाया।

राजा राममोहन राय, राजा शिवप्रसाद, भारतेन्दु हरिश्चंद्र, प्रतापनारायण मिश्र, महावीर प्रसाद द्विवेदी, मैथिलीशरण गुप्त, जयशंकर प्रसाद और सुभद्राकुमारी चौहान जैसे रचनाकारों ने खड़ी बोली हिंदी को कविता, नाटक, पत्रकारिता और गद्य लेखन का स्थायी स्वरूप प्रदान किया। भारतेन्दु हरिश्चंद्र ने इसे सहज, प्रभावशाली और संतुलित भाषा का रूप दिया, जिससे यह आमजन के लिए सुगम बनी। उनके नाटक और पत्रिकाएँ सामाजिक बुराइयों तथा राष्ट्रीय मुद्दों पर प्रहार करने का मंच बनीं। महावीर प्रसाद द्विवेदी ने अनुशासन और तार्किकता पर बल देते हुए इसे आधुनिक साहित्य की मुख्यधारा में प्रतिष्ठित किया। मैथिलीशरण गुप्त और जयशंकर प्रसाद ने इसे महाकाव्यात्मक गरिमा और दार्शनिक गहराई प्रदान की, जबकि सुभद्राकुमारी चौहान ने इसे जनआंदोलन और वीरता का स्वर दिया।

साहित्यिक संस्थाएँ—जैसे नागरी प्रचारिणी सभा, हिंदी साहित्य सम्मेलन और भारतेन्दु मंडल—ने खड़ी बोली के व्याकरण, शब्दकोश निर्माण और मानकीकरण में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। इस भाषा ने न केवल भाव और भक्ति की अभिव्यक्ति का साधन बनने से आगे बढ़कर सामाजिक आलोचना, राजनीतिक जागरण और राष्ट्रनिर्माण का प्रभावी उपकरण का रूप लिया। खड़ी बोली हिंदी का प्रचार औपनिवेशिक भारत में भाषा विकास से कहीं अधिक था; यह एक वैचारिक आंदोलन था जिसने भारतीय समाज को आत्मसम्मान, शिक्षा, समानता और स्वतंत्रता की दिशा में प्रेरित किया। यह भाषा आधुनिक भारत की

पहचान और सांस्कृतिक पुनर्जागरण का आधार बन गई, जिसने साहित्य को जनसंपर्क और सामाजिक परिवर्तन का सशक्त माध्यम बनाया।

मुख्य शब्द

औपनिवेशिक भारत, नवजागरण, खड़ी बोली हिंदी, जनभाषा, सामाजिक सुधार, शिक्षा का प्रसार, वैज्ञानिक दृष्टिकोण, स्त्री स्वतंत्रता, जाति-पात विरोध, राष्ट्रीय चेतना, भारतेंदु हरिश्चंद्र, हिंदी पत्रकारिता, भाषा का मानकीकरण, नागरी प्रचारिणी सभा, हिंदी साहित्य सम्मेलन, आधुनिक हिंदी

मूल आलेख

भारत का नवजागरण 19वीं शताब्दी के उत्तरार्ध और 20वीं शताब्दी के पूर्वार्ध में घटित एक महत्वपूर्ण बौद्धिक और सांस्कृतिक आंदोलन था। यह वह समय था जब भारत अंग्रेजी शासन के अधीन था और भारतीय समाज धार्मिक अंधविश्वासों, सामाजिक कुरीतियों, रूढ़िवादिता और सांस्कृतिक पतन के दौर से गुजर रहा था। इस काल में भारतीय समाज को नवचेतना की आवश्यकता थी और यह चेतना विभिन्न माध्यमों से पनपी – जिसमें भाषा और साहित्य का स्थान सबसे ऊपर रहा। यह वही कालखंड था जिसमें खड़ी बोली हिंदी ने एक सांस्कृतिक क्रांति के रूप में जन्म लिया और नवजागरण की अभिव्यक्ति का माध्यम बनी। भारत में नवजागरण का मुख्य उद्देश्य था – आधुनिक शिक्षा, वैज्ञानिक दृष्टिकोण, सामाजिक सुधार, स्त्री-स्वतंत्रता, जाति-पात के विरोध, राष्ट्रीय चेतना और स्वाभिमान का विकास करना। इस उद्देश्य की पूर्ति के लिए जिस माध्यम की सबसे अधिक आवश्यकता थी, वह थी – जनभाषा। पारंपरिक साहित्य ब्रजभाषा और अवधी जैसी भाव-प्रधान और काव्यात्मक भाषाओं में था, जो श्रृंगार और भक्ति की अभिव्यक्ति में सक्षम तो थीं, परंतु सामाजिक समस्याओं, तर्क और आधुनिक वैचारिक आंदोलनों को अभिव्यक्त करने के लिए उपयुक्त नहीं थीं। ऐसे में खड़ी बोली, जो दिल्ली और पश्चिमी उत्तर प्रदेश की सामान्य बोलचाल की भाषा थी, एक नवीन साहित्यिक भाषा के रूप में उभर कर सामने आई।

किसी भी भाषा का प्रारंभिक रूप मौखिक ही होता है। समयानुसार विकास पाकर वह लिपिबद्ध होती है। लिखित रूप में खड़ी बोली का प्रारंभिक रूप नाथ, सिद्ध, जैनाचार्यों तथा रासों काल के पद्य – साहित्य में प्राप्त होता है। हिंदी के प्रारंभिक काल आदिकाल में खड़ी बोली का परिष्कृत रूप खुसरों की पहेली तथा मुकरी साहित्य में प्राप्त होता है। उदाहरण –

“एक थाल मोती से भरा। सबके सिर औंठा धरा।
चारों ओर वह थाली फिरे। मोती उसमें एक न गिरे ॥”¹

खड़ीबोली का स्फुट प्रयोग प्राचीनकाल से लेकर मध्यकालीन निर्गुण और सगुण सन्तों एवं भक्तों के काव्य तक वर्तमान रही। अकबर के शासनकाल में राजभाषा तो फारसी रही परंतु साहित्य में परंपरागत ब्रजभाषा को प्रधानता दी गई। 12 वीं शती से लेकर 19 वीं शती पूर्वार्ध तक की भाषा ब्रजभाषा बनी रही परंतु गद्य – क्षेत्रों में खड़ीबोली को स्थान दिया जाने लगा था। खड़ी बोली का जो प्रारंभिक रूप प्राचीन गद्य – साहित्य में प्राप्त होता हो, वही राजस्थानी, ब्रजभाषा तथा खुसरों आदि के प्राचीन गद्य से लेकर हिंदी के मध्यकालीन गद्य – साहित्य तक वर्तमान रहा। “मध्यकालीन ‘कुतुबशतम्’ नामक एक गद्य की रचना इस संबंध में उल्लेखनीय है जिसमें खड़ी बोली के ‘जिसका’, ‘इतना’ इत्यादि का स्फुट प्रयोग प्राप्त होता है।”² खड़ी बोली की प्रथम रचना अकबर के समय में कवि गंग कृत – ‘चंद्र छंद बरनन की महिमा’ कही जाती है। परंतु इस ग्रंथ की प्रामाणिकता संदिग्ध है। फिर भी इसमें यह स्पष्ट होता है कि इस समय साहित्य की भाषा के रूप में स्वीकृत न होने पर भी खड़ीबोली में स्फुट गद्य – रचनाएँ लिखी जाने लगी थी। रीतिकालीन गद्य की रचनाओं में ब्रजभाषा और राजस्थानी इत्यादि का प्रभाव कम होते हुए भी खड़ीबोली की प्रवृत्ति के

द्विविध रूप प्राप्त होते हैं। 17वीं शती में दाराशिकोह द्वारा करवाए गए अनुवादों में 'नृसिंहतापती उपनिषद्' का अनुवाद जन प्रह्लाद ने खड़ीबोली में किया। "आचार्य रामचंद्र शुक्ल ने रामप्रताप निरंजनी कृत 'भाषायोग वशिष्ट' नामक गद्य रचना को लल्लूलाल से 60, 62 वर्ष पूर्व की रचना कहा है।"³

भारत में अंग्रेजी शासन के पूर्व खड़ीबोली की जितनी रचनाएँ प्राप्त होती हैं, उनमें से कुछ स्वतंत्र रूप से खड़ीबोली में लिखी गयी तथा कुछ ब्रज और राजस्थानी इत्यादि से युक्त खड़बोली की रचनाएँ हैं। इंशाउल्ला खाँ ने अपनी 'रानीकेतकी की कहानी' हिंदवी छुट और किसी बोली के पुट की दृष्टि से लिखी। सदासुखलाल ने 'सुखसागर' की खड़ीबोली ब्रजभाषा से प्रभावित है। खड़ीबोली का ऐसा मिश्रित रूप सदासुखलाल की रचनाओं में भी प्राप्त होता है। "ईसाई मिशनरियों ने अपने धर्म के प्रचार के लिए खड़ीबोली गद्य को माध्यम बनाया जिसका आदर्श सदासुखलाल की विशुद्ध हिंदी थी।"⁴ मिशनरियों ने अपनी मौलिक रचनाओं के साथ-साथ अनुवाद का कार्य किया। इसके अतिरिक्त मार्शमैन ने 'प्राचीन इतिहास' का 'कथासार' नाम से खड़ीबोली गद्य में अनुवाद किया जिसका एक उदाहरण निम्नलिखित है -

"ईश्वर ने प्रथम आकाश और पृथ्वी को बनाया, जिस पीछे मनुष्य को पृथ्वी की धूल से बनाकर उसकी प्राण प्रतिष्ठा की...।"⁵

ईसाई धर्म - प्रचारकों की खड़ीबोली में ऊर्दू शब्द कम और संस्कृत की तत्सम शब्दावली का अनुपात अधिक है। 1815 ई. में समाज - सुधारक राजा राममोहन राय ने वेदान्त और भाष्य का हिंदी में अनुवाद किया। बंगाली होने के कारण उनकी खड़ीबोली में बंगला का प्रभाव आ गया है। राजा शिवप्रसाद 'सितारे हिंद' ने अपनी 'मानवधर्मसार', 'वामारंजन' आदि प्रारंभिक रचनाओं में संस्कृत मिश्रित खड़ीबोली प्रयुक्त की जिसमें ब्रजभाषा रूप भी आ गए हैं। उदाहरण -

"विदर्भ नगर के राजा भीमसेन की कन्या त्रिभुवनमोहिनी दमयन्ती का रूप और गुण सारे भारतवर्ष में प्रख्यात हो गया था...।"⁶

राजा शिवप्रसाद खड़ीबोली के ऊर्दू मिश्रित रूप का प्रसार कर रहे थे तो दूसरी ओर उनके प्रतिद्वंद्वी राजा लक्ष्मण सिंह उसके विशुद्ध साहित्यिक संस्कृत रूप का पक्ष ले रहे थे। साहित्य के क्षेत्र में भारतेन्दु को आविर्भाव तक खड़ीबोली हिंदी का कोई स्वरूप निश्चित नहीं हो सका था। गद्य में विभिन्न प्रकार की शैलियाँ प्रचलित थीं। भारतेन्दु ने समाज में लिखित भाषा का व्यावहारिक रूप स्थिर करने के लिए शब्द - स्तर पर मध्यममार्ग को अपनाया और अपनी भाषा को न तो संस्कृतनिष्ठ बनाया और न अरबी-फारसी। उदाहरणार्थ -

"मैं तुम्हें क्या तमाशा दिखाऊँगा हां धन्यवाद करूँगा क्योंकि निसन्देह तुमने ऐसा तमाशा दिखाया कि सब कुछ भूल गया, आहा ! स्त्री पुरुष, पंडित, मूर्ख, अपना बिगाना और छोटे बड़े सब का तमाशा देखा पर् वाह ! क्या तमाशा है।"⁷

अपनी इस भाषा के लिए उन्होंने स्वयं 'कालचक्र' नामक पुस्तक में 'हिंदी नए चाल में ढली'⁸ कहा। उनकी भाषा का यही रूप 'कविवचन सुधा' तथा 'बालाबोधिनी' में प्रधान है। उन्होंने न केवल साहित्य को सामाजिक उद्देश्य से जोड़ा, बल्कि खड़ी बोली को कविता, नाटक, गद्य और पत्रकारिता का माध्यम बनाकर स्थापित किया। भारतेन्दु की भाषा सरल, प्रभावशाली और समसामयिक थी। वे मानते थे कि -

"निज भाषा उन्नति अहै, सब उन्नति को मूल।

विन निज भाषा ज्ञान के, मिटत न हिय को मूल ॥"⁹

भारतेन्दु ने तत्कालीन धार्मिक पाखंड और नैतिक पतन पर तीखा व्यंग्य किया गया है। उन्होंने अपने नाटकों - जैसे 'भारत दुर्दशा', 'अंधेर नगरी' आदि के माध्यम से भ्रष्टाचार, विदेशी शासन की दमन नीति और जनता की निष्क्रियता पर गहरी चोट की। भारतेन्दु ने हिंदी पत्रकारिता को भी मजबूत आधार दिया

और 'कविवचन सुधा', 'हरिश्चंद्र चंद्रिका' जैसी पत्रिकाओं के माध्यम से सामाजिक और राष्ट्रीय मुद्दों को उठाया। भारतेंदु के पश्चात जो कवि खड़ी बोली हिंदी के प्रचार और नवजागरण के संवाहक बने, उनमें प्रतापनारायण मिश्र, बद्रीनारायण चौधरी 'प्रेमघन', अयोध्या सिंह उपाध्याय 'हरिऔध' आदि प्रमुख थे। इन सभी ने खड़ी बोली को कविता और गद्य की सशक्त भाषा बनाकर प्रस्तुत किया।

प्रतापनारायण मिश्र ने हास्य-व्यंग्य और संवाद शैली में रचनाएँ लिखीं जो साधारण जन के लिए सुलभ और प्रभावकारी थीं। उनकी भाषा में लोकप्रचलित कहावतों, मुहावरों और व्यंग्यात्मक शैली का अद्भुत मेल था। जग जाने इंग्लिश हमें, वाणी वस्त्रहि जोय।

मितै वदन कर श्याम रंग, जन्म सुफल तब होय ॥¹⁰

महावीर प्रसाद द्विवेदी के संपादन में 'सरस्वती' पत्रिका (1900) ने खड़ी बोली को आधुनिक हिंदी साहित्य की मुख्यधारा में स्थापित किया। उन्होंने भाषा में अनुशासन, विचार में तार्किकता और भाव में संयम को प्राथमिकता दी। इसी मंच से मैथिलीशरण गुप्त जैसे कवि उभरे जिन्होंने खड़ी बोली को महाकाव्यात्मक गरिमामय किया। गुप्त जी की कविता 'भारत-भारती' नवजागरण का घोषणापत्र कही जा सकती है।

"हम कौन थे, क्या हो गए हैं और क्या होंगे अभी,
आओ विचारें आज मिल कर, यह समस्याएँ सभी ॥"¹¹

गुप्त जी ने अपने काव्य में भारत के गौरवशाली अतीत, सामाजिक मूल्यों, नारी चेतना, और स्वराज्य की भावना को प्रमुखता दी। जयशंकर प्रसाद ने खड़ी बोली को छायावादी सौंदर्य, दार्शनिक गहराई और सांस्कृतिक सघनता प्रदान की। 'कामायनी' जैसे महाकाव्य में उन्होंने वेदों, उपनिषदों और पौराणिक पात्रों के माध्यम से नवजागरण की वैचारिकता को चित्रित किया। वही 'लहर' कविता के माध्यम से खड़ी बोली में प्रकृति चित्रण का मनोहरी दृश्य प्रस्तुत किया है।

“बीती विभावरी जागरी।
अम्बर-पनघट में डुबो रही,
तारा-घट ऊषा-नागरी ॥

खग-कुल कुल-कुल सा बोल रहा,
किसलय का अंचल डोल रहा,
तो यह लतिका भी भर लायी –
मधु-मुकुल नवल रस-गागरी ॥”¹²

सुभद्राकुमारी चौहान ने अपनी वीर रस की कविताओं के माध्यम से खड़ी बोली को जन-जन की आवाज़ बना दिया। 'झाँसी की रानी' कविता भारतीय स्वाधीनता संग्राम का प्रतीक बन गई।

“चमक उठी सन् सत्तावन में, वह तलवार पुरानी थी।
बुंदेले हरबोलों के मुँह, हमने सुनी कहानी थी।
खूब लड़ी मर्दानी वह तो, झाँसी वाली रानी थी ॥”¹³

इन कवियों और लेखकों के अतिरिक्त हिंदी नवजागरण में प्रयाग, काशी और लखनऊ जैसे नगरों की साहित्यिक संस्थाओं का योगदान महत्वपूर्ण था। नागरी प्रचारिणी सभा (काशी), हिंदी साहित्य सम्मेलन (इलाहाबाद), भारतेंदु मंडल (वाराणसी) आदि संस्थाओं ने खड़ी बोली हिंदी के प्रचार, व्याकरण, शब्दकोश निर्माण, साहित्य सृजन और मानकीकरण में ऐतिहासिक भूमिका निभाई। इस समूचे आंदोलन की एक सबसे प्रमुख विशेषता यह रही कि खड़ी बोली हिंदी को जनभाषा बनाते हुए इसे आधुनिक युग की जरूरतों के अनुरूप ढाला गया। यह भाषा अब केवल भावनात्मक या भक्ति की भाषा नहीं रही, बल्कि यह सामाजिक आलोचना, राजनीतिक चेतना, स्त्री विमर्श, जाति विरोध और राष्ट्रनिर्माण का औजार बन गई। इस भाषा में

वह शक्ति थी कि वह एक ओर भारत की दयनीय दशा का चित्रण कर सके और दूसरी ओर स्वतंत्रता के लिए लड़ने की प्रेरणा भी दे सके।

निष्कर्षतः कहा जा सकता है कि औपनिवेशिक भारत में खड़ी बोली हिंदी का प्रचार और नवजागरण का उद्भव एक साथ जुड़ा हुआ सामाजिक-सांस्कृतिक जागरण था। खड़ी बोली का उन्नयन केवल भाषाई विकास नहीं था, बल्कि यह एक वैचारिक आंदोलन था जो औपनिवेशिक सत्ता के विरुद्ध जनचेतना को स्वर देने वाला सिद्ध हुआ। भारतेंदु हरिश्चंद्र से लेकर जयशंकर प्रसाद, मैथिलीशरण गुप्त, सुभद्राकुमारी चौहान, प्रतापनारायण मिश्र और बालकृष्ण भट्ट आदि.. इन सभी रचनाकारों ने साहित्य के माध्यम से जनता को शिक्षित किया, संगठित किया और उन्हें अपने अधिकारों के प्रति जागरूक किया। इस आंदोलन ने स्त्री-स्वतंत्रता, सामाजिक समानता, शिक्षा, भाषा, धर्म और राष्ट्रवाद जैसे मुद्दों को साहित्य के केंद्र में रखा। खड़ी बोली हिंदी ने ब्रज और अवधी की काव्यात्मक परंपराओं से अलग हटकर एक ऐसे यथार्थवादी भाषा-संस्कृति का निर्माण किया जो आधुनिक भारत के निर्माण की भाषा बन सकी।

अतः खड़ी बोली हिंदी का नवजागरण में योगदान भारतीय राष्ट्रीय अस्मिता, सांस्कृतिक पुनर्जागरण और सामाजिक परिवर्तन की प्रक्रिया का एक अनिवार्य स्तंभ रहा है, जिसने हिंदी को केवल एक भाषा नहीं, बल्कि भारतीय आत्मा की अभिव्यक्ति बना दिया।

संदर्भ ग्रंथ सूची

1. खुसरो की हिंदी कविता, ब्रजरत्नदास पृ. 55
2. प्राचीन खड़ीबोली गद्य में भाषा का स्वरूप, डॉ. प्रेमप्रकाश गौतम, राजर्षि अभिनंदन ग्रंथ, पृ. 468।
3. हिंदी साहित्य का इतिहास – रामचंद्र शुक्ल पृ. 348
4. हिंदी साहित्य का इतिहास, आचार्य रामचंद्र शुक्ल पृ. 388
5. कथासार, अनुवादक रतनलाल, अध्याय 1, पृ. 1
6. वामारंजन हिंदी साहित्य कोश, भाग 2, पृ. 456
7. वैदिकी हिंसा हिंसा न भवति, भारतेंदु हरिश्चंद्र पृ. 7
8. कालकत्र पृ. 22
9. हिंदी लेक्टर, नागरी प्रचारणी सभा
10. प्रतापनारायण मिश्र ब्राह्मण पत्रिका
11. भारत - भारती मैथलीशरण गुप्त पृ. 5
12. लहर जयशंकर प्रसाद पृ. 22
13. पुस्तक : वसंत भाग 1 (पृष्ठ 54) रचनाकार : सुभद्राकुमारी चौहान प्रकाशन : एनसीईआरटी संस्करण : 2022
